कबीर साहिब

की

ज्ञान गुदड़ी रेख़ते और झूलने

कबीर साहिब

की

ज्ञान-गुदड़ी रेख़ते और

झूलने

जिस के आदि में कबीर साहिब के इष्ट के विषय में संक्षेप में तर्क किया है और फ़ुट-नोटों में गूढ़ शब्दों के अर्थ दिये हैं

प्रकाशक

बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग।

तीसरा एडिशन

दाम ।=)

Printed at The Belvedere Printing Works, Allahabad, by E. Hall.

चुकीं जिन का नमूना देख कर महामहोपाध्याय श्री पंडित सुधाकर द्विवेदी बैकुंठ-बासी ने गद्गद होकर कहा था—"न भूतो न भविष्यति"।

एक अनूठी और अति अद्वितीय पुस्तक महात्माओं और बुद्धिमनों के बचनों की "लोक परलोक हितकारी" नाम की गद्य में सन् १९१६ में छपी है जिसके विषय में श्रीमान महाराजा काशी नरेश ने लिखा है—"वह उपकारी शिक्षाओं का अचरजी संग्रह है जो सोने के तोल सस्ता है"।

पाठक महाशयों की सेवा में प्रार्थना है कि इस पुस्तक-माला के जो दोष उन की दृष्टि में आवें उन्हें हम को कृपा करके लिख भेजें जिस से वह दूसरे छापे में दूर कर दिये जावें।

हिन्दी में और भी अनूठी पुस्तकें छपी हैं जिन में प्रेम कहानियों के द्वारा शिक्षा बतलाई गई हैं— उनके नाम और दाम इस पुस्तक के अन्त वाले पृष्ठों में देखिये।

मनेजर, बेलवेडियर छापाख़ाना

अक्टूबर स० १९२३ ई० इलाहाबाद।

कबीर साहिब का इष्ट

कबीर साहिब की शब्दावली के पहिले भाग के आदि में उन महात्मा का जीवन-चरित्र दिया है जिस में लिखा है कि कबीर साहिब का इष्ट "सत्त पुरुष" (निर्मल चेतन्य देश का धनी) था जो ब्रह्म और पारब्रह्म दोनों के परे है और उसी इष्ट और उसके धुन्यात्मक नाम की महिमा उन्हों ने अपनी बानी में दृढ़ाई है, पर कितने ही पद पुराने प्रमानिक हस्त-लिखित ग्रंथों में ऐसे भी हैं जिनमे राम नाम की महिमा गाई है [उस का अभिप्राय औतार स्वरूप श्रीरामचंद्र जी से नहीं बरन ब्रह्मांड की चोटी (शुन्य) के धुन्यात्मक शब्द "राँ" से, जैसा कि उन पदों को पूरा पूरा पढ़ने और अर्थ पर बिचार करने से साफ़ खुल जाता है]

इस का स्पष्ट कारन यह है कि जब तक-जगत प्रचलित नाम या इष्ट की महिमा न की जाती सर्बसाधारन लोग कबीर साहिब की बानी से दूर भागते और नये इष्ट के नाम से चौंकते, इस लिये उन के उपदेश का उतने लोगों को कदापि लाभ न पहुँचता जितना कि इस जुगत से हुआ। इसी अभिप्राय से कबीर साहिब ने स्वामी रामानन्द जी को मर्य्यादा और लोक-दिखावा के लिये अपना गुरू धारन किया।

कितनेही असली पद कबीर साहिब के ऐसे भी हैं जिनमें उन्होंने सिवाय "सत्त नाम" के कुल औतार सरूपों के नाम का खुले तौर पर खंडन किया है और केवल "सत्त नाम" ही को अबिनाशी बतलाया है (क्योंकि प्रलय और महाप्रलय में कुल ब्रह्मांड और पारब्रह्मांड के धनियों के नाम का अभाव हो जाता है) पर कबीर साहिब के गुप्त होने के पीछे बहुत से राम नाम के टेकियों ने उनके ऐसे पदों में भी जहाँ कबीर साहिब ने "सत्त नाम" की महिमा जताई है राम नाम बना दिया। यदि पक्षपात और टेक छोड़ कर बिचार से कबीर साहिब के पदों को पढ़ा जाय तो निश्चय हो जायगा कि कबीर साहिब ने अपनी बानी में बिशेष कर "सत्त नाम" ही को दृढ़ाया है, पर जहाँ राम नाम

की महिमा की है वह शब्द भी केवल उस नाम के होने से छेपक नहीं कहे जा सकते। इसी के साथ राम नाम के टेकियों की यह बहस भी कि "सत्त नाम" से कबीर साहिब का अभिप्राय राम नाम ही से है ठीक नहीं है जैसा कि भेद बानी के कई शब्दों से स्पष्ट होता है जिन मे पिंड ब्रह्मांड और निर्मल चेतन्य देश के लोकों के धनियों और हर एक स्थान के धुन्यात्मक शब्द को खोल कर अलग अलग बताया है—दृष्टांत के लिये शब्द २२ व २३ पृष्ठ ७६ से ८४ तक कबीर शब्दावली भाग १ के देखिये।

इस पुस्तक के दूसरे छापे (एडिशन) में रेख़्ते और झूलने जो कबीर शब्दावली के पहिले और दूसरे भागों में छपे थे वहाँ से निकाल कर कुछ नये रेख़्तों और झूलनों के साथ शामिल किये गये हैं जिस से प्रमान इस का बढ़ गया है॥

इलाहाबाद
अक्टूबर, सन १९२३

अधम,
एडिटर, संतबानी पुस्तक-माला।

ज्ञान गुदड़ी कबीर साहिब की

धर्मदास बिनवै कर जोरी ।
सतगुरु सुनिये बिनती मेरी ॥ १ ॥
ज्ञान गूदड़ी करो प्रकासा ।
जा से मिटै जीव जग-फाँसा ॥ २ ॥
अलख पुरुष इक कीन्ह पसारा ।
लख चौरासी धागा डारा ॥ ३ ॥
पाँच तत्त से गुदड़ी बीनी ।
तीन गुनन से ठाढ़ी कीनी ॥ ४ ॥
ता मैं जीव ब्रम्ह अरु माया ।
समरथ ऐसा खेल बनाया ॥ ५ ॥
सब्द की सुई सुरत के डोरा ।
ज्ञान के डोभन सिरजन जोरा ॥ ६ ॥
सीवन पाँच पचीसे लागी ।
काम क्रोध मोह मद पागी ॥ ७ ॥
काया गुदड़ी के बिस्तारा ।
देखो संतो अगम सिंगारा ॥ ८ ॥
चाँद सुरज दोउ पैवँद लागे ।
गुरु प्रताप सोवत उठि जागे ॥ ९ ॥
अब गुदड़ी की करु हुसियारी ।
दाग न लागै देखु बिचारी ॥ १० ॥
जिन गुदड़ो को किया बिचारा ।
तिन हीं भेटे सिरजनहारा ॥ ११ ॥

सुमति के साबुन सिरजन धोई ।
कुमति मैल सब डारो खोई ॥ १२ ॥
धीरज धूनी ध्यान को आसन ।
सत कोपीन सहज सिंहासन ॥ १३ ॥
जोग कमंडल कर गहि लीन्हा ।
जुगति फावरी[1] मुरसिद दीन्हा ॥ १४ ॥
सेली सील बिबेक कि माला ।
दया कि टोपी तन धर्मसाला ॥ १५ ॥
मेहर मतंगा मत बैसाखी ।
मृगछाला मनहीं की राखो ॥ १६ ॥
निःचय धोती स्वास जनेऊ ।
अजपा जपै सो जानै भेऊ ॥ १७ ॥
लकुटी लौ की हिरदा झोरा ।
छिमा खड़ाऊँ पहिरि बहोरी॥ १८ ॥
भगति मेखला सुरत सुमिरनी ।
प्रेम पियाला पीवे मौनी ॥ १९ ॥
उदास कूबरी कहल निवारी ।
ममता कुतिया को ललकारी ॥ २० ॥
जगत जँजीर बाँधि जब दीन्ही ।
अगम अगोचर खिड़की चीन्ही ॥ २१ ॥
तत्त तिलक दीन्हे निरबाना ।
राग त्याग बैराग निधाना ॥ २२ ॥

---

(१) फ़रुही जिस से साधू लोग अपने बैठने की जगह साफ़ कर लेते हैं ।

गुरु गम चकमक मनसा तूला[१] ।
ब्रम्ह अगिनि परगट करि मूला ॥२३॥
संसय सोग सकल भ्रम जारी ।
पाँच पचीसो परगट मारी ॥२४॥
दिल दरपन करि दुबिधा खोई ।
सो बैरागी पक्का होई ॥२५॥
सुन्न महल मैं फेरा देई ।
अमृत रस की भिच्छा लेई ॥२६॥
दुख सुख मेल जगत कै भावा ।
तिरबेनी के घाट छुड़ावा ॥२७॥
तन मन सोधि भयो जब ज्ञाना ।
तब लख पायो पद निर्बाना ॥२८॥
अष्ट कँवल दल चक्कर सूझै ।
जोगी आप आप मैं बूझै ॥२९॥
इँगला पिँगला के घर जाई ।
सुखमन सेज जाय ठहराई ॥३०॥
ओअं सोहं तत्त बिचारा ।
बंक नाल का किया सम्हारा ॥३१॥
मन को मारि गगन चढ़ि जाई ।
मानसरोवर पैठि अन्हाई ॥३२॥
छूटे कलमल मिले अलेखा ।
इन नैनन साहिब को देखा ॥३३॥

---

(१) रुई ।

अहंकार अभिमान बिडारा।
घट का चौका करि उँजियारा ॥ ३४ ॥
अनहद नाद नाम की पूजा।
सत्त पुरुष बिन देव न दूजा ॥ ३५ ॥
हित कर चंदन तुलसी फूला।
चित कर चाउर संपुट मूला ॥ ३६ ॥
सरधा चँवर प्रीति कर धूपा।
नूतन[१] नाम साहिब कर रूपा ॥ ३७ ॥
गुदड़ी पहिरे आप अलेखा।
जिन यह प्रगट चलायो भेषा ॥ ३८ ॥
सत्त कबीर बकस जब दीन्हा।
सुर नर मुनि सब गुदड़ी लीन्हा ॥ ३९ ॥
रहै निरंतर सतगुरु दाया।
सतसंगति मेँ सब कछु पाया ॥ ४० ॥
ज्ञान गूदड़ी पढ़ै प्रभाता।
जनम जनम के पातक जाता ॥ ४१ ॥
जो जन जाय जपै ये ध्याना।
सो लखि पावै पद निर्बाना ॥ ४२ ॥
संझा सुमिरन जो जन करहीँ।
जरा मरन भौसागर तरहीँ ॥ ४३ ॥
कहै कबीर सुनो धर्मदासा।
ज्ञान गूदड़ी करो प्रकासा ॥ ४४ ॥

॥ इति ॥

---

(१) नवीन, अचरजी।

रेख़ते ।

(१)

गुरुदेव बिन जीव की कल्पना ना मिटै,
गुरुदेव बिन जीव का भला नाहीं ।
गुरुदेव बिन जीव का तिमर नासै नहीं,
समझि बिचारि ले मनै माहीं ॥
राह बारीक गुरुदेव तें पाइये,
जनम अनेक की अटक खोलै ।
कहै कबीर गुरुदेव पूरन मिलै,
जीव और सीव तब एक तोलै ॥

(२)

करो सतसंग गुरुदेव के चरन गहि,
जासु के दरस तें भर्म भागै ।
सील औ साच संतोष आवै दया,
काल की चोट फिरि नाहिं लागै ॥
काल के जाल में सकल जिव बंधिया,
बिन ज्ञान गुरुदेव घट अंधियारा ।
कहै कबीर जन जनम आवै नहीं,
पारस परस पद होय न्यारा ॥

(३)

गुरुदेव के भेद को जीव जानै नहीं,
जीव तो आपनी बुद्धि ठानै ।
गुरुदेव तो जीव को काढ़ि भवसिंध तें,
फेरि लै सुक्ख के सिन्ध आनै ॥
बंद करि दृष्टि को फेरि अंदर करै,
घट का पाट गुरुदेव खोलै ।

कहत कबीर तू देख संसार मैं,
गुरुदेव समान कोइ नाहिं तोलै ॥

(४)

रैन दिन संत यों सोवता देखता,
संसार की ओर से पीठि दीये ।
मन औ पवन फिर फूटि चालैं नहीं,
चंद औ सूर को सम्म कीये ॥
टकटकी चंद चकोर ज्यौं रहतु है,
सुरत औ निरत का तार बाजै ।
नौबत घुरत है रैन दिन सुन्न मैं,
कहै कबीर पिउ गगन गाजै ॥

(५)

पाव और पलक की आरती कौन सी,
रैन दिन आरती संत गावै ।
घुरत निस्सान तहँ गैब की झालरा,
गैब के घंट का नाद आवै ॥
तहँ नीव बिन देहरा[1] देव निर्बान है,
गगन के तख्त पर जुगत सारी ।
कहै कबीर तहँ रैन दिन आरती,
पासिया पाँच पूजा उतारी ॥

(६)

साईं आप की सेव तो आप ही जानिहो,
आप का भेव कहो कौन पावै ।
आपनी आपनी बुद्धि अनुमान से,
बचन बिलास करि लहरि लावै ॥

---

(१) मंदिर ।

तू कहै तैसा नहीं, है सो दीखै नहीं,
निगम हूँ कहत नहिं पार जावै।
कहै कबीर या सैन गूँगा लईं,
होइ गूँगा सोई सैन पावै॥

(७)

कर्म और भर्म संसार सब करत है,
पीव की परख कोइ संत जानै।
सुरत और निरत मन पवन को पकर करि,
गंग और जमुन के घाट आनै॥
पाँच को नाथ करि साथ सोहूँ[1] लिया,
अधर दरियाव का सुक्ख मानै।
कहै कबीर सोइ संत निर्भय घरा,
जनम और मरन का भर्म भानै॥

(८)

दूर वे दूर वे दूर वे दूरमति,
दूर की बात तोहिं बहुत भावै।
है हजूर हाजिर साहिब धनी,
दूसरा कौन कहु काहि गावै॥
छोड़ि दे कल्पना दूरि का धावना,
राज तजि खाक मुख काहि लावै।
पेड़ के गहे तें डारि पल्लौ मिलै,
डारि के गहे नहिं पेड़ पावै॥
डारि औ पेड़ औ फूल फल प्रगट है,
मिलै जब गुरू इतनो लखावै।

---

(१) सनमुख, संग।

संपति सुख साहिबी छोड़ि जोगी भये,
सून्य की आस बनखंड जावै ॥
कहै कबीर बनखंड मैं क्या मिलै,
दिल को खोजु दीदार पावै ॥

(६)

राम ही राम सब जगतही कहत है,
कहो जी राम का रूप कैसा ।
कौन सी कोठरी कौन दर्बार है,
कौन से महल मैं राम बैसा[१] ॥
कौन सी सुन्दरी रमै सुख सेजि मैं,
दिवस औ रैन मिलि स्याम संगा ।
मिलि गई पीव से और दरसै नहीं,
नारि औ पुरुष मिलि एक अंगा ॥
कहो जी राम कौन सा रंग है,
हरित की सेत रत[२] पीत काला ।
कहो जी राम का कौन अस्थूल[३] है,
ज्वान देखा किधौं बृद्ध बाला ॥
बेद से रहित है भेद कैसे प्रगट,
बिना मुख जीभ आवाज होई ।
रमै घट घट मैं आपु न्यारा रहै,
पूर्न आनंद है राम सोई ॥
पाँच पच्चीस गुन तीन तेँ रहित है,
कौन सी दृष्टि से राम देखा ।

---

(१) बैठा । (२) लाल । (३) शरीर ।

सोई हैं संत जिन्ह भेद पाया सही,
कहै कबीर जिन्ह राम पेखा ॥

(१०)

राम का नाम संसार में सार है,
राम का नाम अमृत्त बानी ।
राम के नाम तें कोटि पातक हरै,
राम का नाम बिस्वास मानी ॥
राम का नाम लै साधु सुमिरन करै,
राम का नाम लै भक्ति ठानी ।
राम का नाम लै सूर सन्मुख लरै,
पैठि संग्राम में जुद्धि ठानी ॥
राम का नाम लै नारि सत्ती भई,
जरी मरि कंत सँग खेह उड़ानी ।
राम का नाम लै तीर्थ सब भरमिया,
करत अस्नान झकोरि पानी ॥
राम का नाम लै मूर्तिपूजा करै,
राम का नाम लै देत दानी ।
राम का नाम लै बिप्र भिच्छुक बनै,
राम का नाम दुर्लभ जानी ॥
राम का नाम चारि बेद का मूल है,
निगम निचोर करि तत्व छानी ।
राम का नाम षट सासतर मथिये,
षट दरसन में चली कहानी ॥
राम का नाम अगाध लीला बड़ी,
खोजते खोज नहिं हारि मानी ।

राम का नाम लै बिस्नु सुमिरन करै,
राम का नाम सिव जोग ध्यानी ॥
राम का नाम लै सिद्ध साधक बनै,
सिव सनकादि नारद गियानी ।
राम का नाम लै रामचँद दृष्टि लइ,
गुरु बसिष्ठ भये मंत्र दानी ॥
कहाँ लौं कहौं अगाध लीला रची,
राम का नाम काहू न जानी ।
राम का नाम लै कृस्न गीता कथी,
बाँधिया सेत तब मर्म जानी ॥
है कैसो निरगुन निराकार परम जोति,
तासु को नाम निरंकार मानो ।
रूप बिन रेख बिन निगम अस्तुति करै,
सत्त की राह अकथ कहानी ॥
बिस्नु सुमिरन करै सिव जोग जा को धरै,
भनै सब ब्रह्म बेदान्त गाया ।
सनकादि ब्रह्मादि कोइ पार पावै नहीं,
तासु का नाम कह रामराया ॥
कहै कबीर वह सक्स[1] तहक़ीक़ करु,
राम का नाम जो पृथी लाया ।

(११)

संत की चाल संसार तें भिन्न है,
सकल संसार मैं चुहल-बाजी[2] ।

(१) आदमी । (२) दिल्लगी, झूठा खेल ।

हिन्दू मुसलमान दोइ दीन सरहद बने,
बेद किंतेब परपंच साजी ॥
हिन्दू के नेम आचार पूजा घनी,
बर्त एकादसी रहत राजी ।
बकरी मारि कै मास भच्छन करै,
भगत न होय यह दगाबाजी ॥
जीव का हतन अपराध का मूल है,
कठिन यह चूक चित चेतु हाजी ।
सकल धर्म ऊपर कृस्न गीता कथी,
कृस्न का कहा तू मान पाजी ॥
कृस्न गीता पढ़ै दृष्टि उघरी नहीं,
येहि बक मुआ तूँ मूढ़ पाजी ।
जीव दया मम दया कृस्न कहि,
भैंस के आगे ज्यौं बेनु बाजी ॥
मुसलमान कलमा पढ़ै तीस रोजा रहै,
बंग निमाज धुनि करत गाढ़ी ।
बकरी मुरगी मारि जिबह करै,
गाय पछाड़ि कै कोह काढ़ी ॥
हठा न मानौं मियाँ पाओ अपना किया,
भिस्त न्यारी रही नर्क डारी ।
होइगा हिसाब तो ज्वाब क्या देवगे,
लेजाइँगे फिरिस्ते पकरि दाढ़ी ॥
कठिन कुन्दी करैं कष्ट भारी पड़ै,
होइ तबही चीन्हि पड़ै गाढ़ी ।

दुख दुंद भारी अबहू चेता नहीं,
फेर पछितावगे रार बाढ़ी ॥
मोम दिल मेहरबाँ दया दिल में धरो,
भिस्त हर रोज सो रहे ठाढ़ी ।
कहै कबीर सुख साहिबी सो करै,
साच को चीन्ह करि झूठ छाड़ी ॥

(१२)

दीद बरदीद परतीत आवै नहीं,
दूरि की आस बिस्वास भारी ।
कथा औ कबित इस्लोक रसरी बटै,
बकै बहु बाथ मुख मूढ़ अनारी ॥
हृदै सूझै नहीं संधि बूझै नहीं,
निकटहीं बस्तु लै दूरि डारी ।
तत्त को छाड़ि निःतत्त को सब कथै,
भर्म में पड़े सब भेषधारी ॥
जटाधारी घने जती जोगी बने,
मुद्दरा पहिरि कै कान फारी ।
नग्न नागा रहै सर्ब लज्जा तजै,
बज्र कछोट[1] कसि काम जारी ॥
(एकै) छेदि अजूज[2] तन घूँघरू बाँधि कै,
स्वाँग केते कहूँ गर्ब धारी ।
(एकै) आकास मौनी मुखी उर्धबाहू नखी,
भये थानेस्वरी दंभकारी ॥

---

(१) अष्ट धात का काछा । (२) इन्द्री ।

(एकै)बाँधि पग खंभ मैं अधोमुख झूलिया,
  धूम घूँटै तन कष्ट कारो[1] ।
(एकै) बैठे गोसा[2] मारि पंच अगिन तन तपै,
  (एकै) बैठे जल सैन आसन मारी ॥
(एकै) अन्न छाड़े फिरै दूबर अंगन रहै,
  (एकै) दूध भोजन करै दूधधारी ।
(एकै) लोन छाड़ि के भये हैं अलोनियाँ,
  गाड़ि रहे गुफा मैं लाय तारी ॥
(एकै) तिलक माला धरे मूरति पूजा करै,
  संख धुनि आरती जोति बारी ।
सेवा कीन्हा सही देव चीन्हा नहीं,
  आत्मा-राम तजि जड़ पूजकारी ॥
पूजि पाषान अभिमान अंधा हुआ,
  चित्त चेतन्य तैं बीच पारी ।
जोग पंडित बड़े सास्त्र गीता पढ़े,
  भर्म की भीत नहिं टरत टारी ॥
कहाँ लै कहौं बहुरूप को पेखना,
  आपु आपनो सभनि बिसारी ।
इतनो बिडम्बना तैं बस्तु न्यारे रही,
  ज्ञान की दृष्टि लीजै बिचारी ॥
कहै कबीर कोइ संत जन जौहरी,
  काटि जम फंद उठि चेत सँभारी ॥

(१३)

दीदबरदीद परगट परतच्छ है,
  दृष्टि डारी बेदृष्टि ज्ञानी ।

---

(१) धुएँ को पीते हैं और तन को कष्ट देते हैं । (२) एकांत ।

सृष्टि यहाँ आपु है आपु यहाँ सृष्टि है,
आपुही अगिन छिति[1] पवन पानी ॥
आपुही बीज है आपुही अंकुर है,
रज औ सत्त तम गुन बखानी ।
पिंड महँ प्रान है प्रान महँ पिंड है,
पिंड औ प्रान को भिन्न मानी ॥
पिंड का सिरजता बोलता ब्रह्म है,
नजर पसारि तूँ देखु ज्ञानी ।
जासु कारन तुम देस पृथ्वी तजी,
तत्व को छाड़ि भये जोग ध्यानी ॥
सोइ दूरि काहे धरी दरस ले हर घरी,
दूर का आसरा सुपन कहानी ।
बोलता जीव सरबज्ञ साहिब बना,
कर्ता सरूप की यह निसानी ॥
एक तैं अनँत है अनँत तैं एक है,
सुघर जन दृष्टि करि साच मानी ।
सकल बिस्तार परकास जा तैं भया,
सोई घट माहिँ निज तत्त छानी ॥
दया की दृष्टि महँ दरस औ परस है,
दया बिनु ढुंढ दुनिया दिवानी ।
दुनिया दुरमती सुमति तैं बीछुड़ी,
धंध धोखा किया कुमति ठानी ॥
आपु को ना लखै आपु भटकत फिरै,
आपु हीं बावरी आपु स्यानी ।

---

(१) पृथ्वी ।

गाफिली आपनी आपु समुझै नहीं,
छुच्छ के फटके फोफ उड़ानी।
कहै कबीर बौवाय[1] मैं सब गये,
कहा हम बहुत काहू न मानी॥

(१४)

चाम के महल मैं बोलता राम है,
चाम औ राम को चीन्हु भाई।
धन्न उस्ताद जिन्ह चाम मूरति गढ़ी,
सकल सिंगार छबि रूप छाई॥
एक ही बुन्द तैं साज साबित किया,
बिबिधि परकार करि जन्त्र लाई।
पाँव औ पिंडुरी जंघ कटि[2] केहुनी,
नाभि कुंडलि रची सरस भाई॥
पवन की गाँठि दे महल ठाढ़ा किया,
हृदय बिचित्र भुजडंड लाई।
हाथ औ अंगुरी सकल पूरी बनी,
अंगुरी अग्र मैं नखन लाई॥
कंठ मस्तक मनी मुकुट लीलाट है,
रत्न धन नैन दुइ दृष्टि पाई।
स्रवन मुख नासिका दसन[3] सीखर[4] बने,
बदन उजियार सोभा निकाई॥
पीठि पाछे बनी मेरु डँड लागिया,
पाँसुरी बीच पिंजर गढ़ाई॥

---

(१) सुपने मैं बर्राना। (२) कमर। (३) दाँत। (४) सिर।

चाम बीच माँस है माँस बिच हाड़ है,
हाड़ के बिच नस रोम लाई ॥
गूद बिच बिंद है बिंद बिच पवन है,
पवन बिच प्रान बोलत जु होई ।
कहै कबीर यह ख्याल करता किया,
ज्ञान की दृष्टि तैं चीन्हु सोई ॥

(१५)

भेष दरियाव मैं हंस भी होत हैं,
भेष दरियाव मैं बग्ग[१] होई ।
भेष दरियाव मैं रत्न भी होत है,
भेष दरियाव मैं संख होई ॥
जिवत मरे बिना भेद पावै नहीं,
जिवत हीं मरै तब भेद पावै ।
कहै कबीर गुरुदेव के ज्ञान से,
तब कछू नीमन[२] दृष्टि आवै ॥

(१६)

साच औ झूठ की तान कैसे मिलै,
रैन औ दिवस का फेर भाई ।
लोन औ सरकरा[३] एक सो होत है,
कालपी[४] जात का लोन पाई ॥
हंस औ बग्ग तो एक से होत हैं,
भच्छ मैं होत कछु फेर भाई ।
कहै कबीर सो हंस मुक्ता चुनै,
बग्ग तो माछरी ढूढ़ि खाई ॥

---

(१) बकुला । (२) पक्की, पूरी । (३) चीनी । (४) कालपी नगर की मिसरी मशहूर है ।

(१७)

भेष को देखि के कोई भूलो मती,
भेष पहिरे कोई सिद्ध नाहीं ।
काम औ क्रोध मद लोभ माहीं घने,
सील औ साच संतोष नाहीं ॥
कपट के भेष तें काज सीझै नहीं,
कपट के भेष नहिं राम राजी ।
कहै कबीर इक साच करनी बिना,
काल की चोट फिर खाइगा जी ॥

(१८)

कहत बैराग औ राग छूटै नहीं,
पाँच को राचि करि साच खोया ।
इन्द्री स्वारथ को सबद अनुभव कथै,
पंथ को बाद करि जीव छोया ॥
नाम निरगुन कहै रहै सरगुन महीं,
सिष्य साखा की भूख घेरी ।
कहै कबीर जब काल गढ़ घेरिहै,
कौन है जीव की गत्ति तेरी ॥

(१९)

बिना बैराग कहु ज्ञान केहि काम का,
पुरुष बिनु नारि नहिं सोभ पावै ।
स्वाँग तो साहु का काम है चोर का,
कपट की झपट में बहुत धावै ॥
बात बहुते कहै झूठ छूटै नहीं,
मुख के कहे कहा खाँड़ खावै ।

कहै कबीर जब काल गढ़ घेरिहै,
बात बहु बकै सब भूलि जावै ॥

(२०)

नाच आवै तबै काछ को काछिये,
नाच बिन काछ केहि काम आवै ।
पहिरि सलाह[1] धरि नाँव रनजीत का,
बे घमासान किये भागि जावै ॥
उतरि रन सन्मुख का डरै रन महीं,
दाद दरगाह में नाहिं पावै ।
चाल है भैंड़ की खाल है सिंघ की,
कहै कबीर तेहि स्यार खावै ॥

(२१)

बेद बेदान्त औ कहत है भागवत,
अर्थ अनुभव का करत नीका ।
आत्म को भूलि के ढूँढ़ते सास्त्र को,
रहा सरजाम बिनु सर्ब फीका ॥
काम औ क्रोध उर माहिँ काँटा घना,
नाम निर्बान का नाहिँ टीका ।
कहै कबीर कारज कैसे सरै,
कनक औ कामिनी हाथ बीका ॥

(२२)

अलख के पलक में खलक सब जायगा,
परख दीदार दिल यार तेरा ।
सुरत में निरत करि भाव गाया करो,
यही बंदे बंदगी फलै तेरा ॥

---

(१) शस्त्र, हथियार ।

घोट का पै करो उलटि आपै डरो,
जहाँ देखो तहाँ प्रान मेरा ।
अकिल से खोजि ले गाफ़िली छोड़ि दे,
चेति ले समुझि ले यही बेरा[1] ॥
सुन्न का बुदबुदा सुन्न उतपत भया,
सुन्नहीं माहिं फिर गुप्त होई ।
जाप अजपा जपो अलख आपै लखो,
बाहरे भीतरे एक होई ॥
बैराट के खेल में सकलही रमि रहा,
भर्म की भीति मति नाँघ कोई ।
अडोल अबोल गुरु सबद लागा रहै,
कहै कबीर फकीर सोई ॥

(२३)

ब्रम्ह है बृच्छ ता फूल माया भई,
फूल तें तीन फल लिये उपाई ।
लख चौरासी जोनि बाजी रची,
ब्रम्हही बीज ता में समाई ॥
पाँच जो तत्व ता बीच वे खँभ भये,
काया यह दुर्मति देवल बनाई ।
पाँच लग लाय परकिर्ति पच्चीस लै,
झोपड़ी बदन सो सुघर छाई ॥
ब्रम्ह तें जीव भो जगत में बहि रहा,
बिखरिया खाँड़ ज्यों रेत समाई ।

(१) समय ।

बीनते ना बनै छानते ना छनै,
पकड़िये एक सो मूल जाई ॥
एक जिव जानि कुल कानि तजु रे मना,
समुझु रे मन बहुत कष्ट पाई ।
जुगन जुग भर्मिया कर्म बहु कर्मिया,
आस की फाँस में क्या सताई ॥
सरन सतगुरु लिया सुमति ऐसे भई,
घोरि के खाँड़ जल में जमाई ।
ब्रम्हही अग्नि पर औंटि के ताइया,
कहै कबीर बहु कंद पाई ॥

(२४)

गंगा उलटी धरो जमुन बासा करो,[१]
पलटि पँच तीरथ पाप जावै ।
नीर निर्मल तहाँ रैन दिन झरतु है,
न्हाय जो बहुरि भवसिंध न आवै ॥
फिरत बौरे तहाँ बुद्धि को नास है,
बाज के झपट में सिंघ नाहीं ।
कहै कबीर उस जुक्ति को गहैगा,
जनम औ मरन तब अंत पाई ॥

(२५)

देख वोजूद में अजब बिसराम है,
होय मौजूद तो सही पावै ।
फेरि मन पवन को घेरि उलटा चढ़ै,
पाँच पच्चीस को उलटि लावै ॥

---

(१) गंग अर्थात दहिनी स्वासा को चढ़ाओ और जमुन अर्थात बाँई स्वासा के साथ मिलाओ ।

सुरत की डोर सुख सिंध का झूलना,
घोर की सोर तहँ नाद गावै ।
नीर बिन कँवल तहँ देख अति फूलिया,
कहै कबीर मन भँवर छावै ॥

(२६)

चक्र के बीच में कँवल अति फूलिया,
तासु का सुक्ख कोइ संत जानै ।
कुलुफ[1] नौद्वार औ पवन को रोकना,
तिरकुटी मद्ध मन भँवर आनै ॥
सबद की घोर चहुँ ओर ही होत है,
अधर दरियाव को सुक्ख मानै ।
कहै कबीर यों झूल सुख सिंध में,
जन्म औ मरन का भर्म भानै[2] ॥

(२७)

गंग औ जमुन के घाट को खोजि ले,
भँवर गुंजार तहँ करत भाई ।
सरसुती नीर तहँ देखु निर्मल बहै,
तासु के नीर पिये प्यास जाई ॥
पाँच की प्यास तहँ देखि पूरी भई,
तीन की ताप तहँ लगे नाहीं ।
कहै कबीर यह अगम का खेल है,
गैब का चाँदना देख माहीं ॥

---

(१) ताला (२) तोड़ै ।

(२८)

माड़ि मत्थान मन रई[१] को फेरना,
होत घमसान तहँ गगन गाजै ।
उठत झनकार तहँ नाद अनहद घुरै,
तिरकुटी महल के बैठु छाजै[२] ॥
नाम की नेत[३] करि चित्त को फेरिया,
तत्त को ताय करि घिर्त लीया,
कहै कबीर यों संत निर्भय हुआ,
परम सुख धाम तहँ लागि जीया ॥

(२९)

गड़ा निस्सान तहँ सुन्न के बीच मैं,
उलटि के सुरत फिर नाहिं आवै ।
दूध को मत्थ करि घिर्त न्यारा किया,
बहुरि फिर तत्त मैं ना समावै ॥
माड़ि मत्थान तहँ पाँच उलटा किया,
नाम नौनीति[४] लै सुरत फेरी ।
कहै कबीर यों संत निर्भय हुआ,
जन्म औ मरन की मिटी फेरी ॥

(३०)

ससि परकास तें सूर ऊगा सही,
तूर बाजै तहाँ संत झूलै ।
तत्त झनकार तहँ नूर बरसत रहै,
रस्स पीवै तहाँ पाँच भूलै ॥

---

(१) मथनी । (२) छज्जे पर । (३) रस्सी । (४) मक्खन ।

दरियाव औ बुन्द ज्यों देखु अंतर नहीं,
जीव औ सीव यों एक आहीं ।
कहै कबीर या सैन गूँगा तई,
बेद कत्तेब की गम्म नाहीं ॥

(३१)

अगम अस्थान गुरु-ज्ञान बिन ना लहै,
लहै गुरु-ज्ञान कोइ संत पूरा ।
द्वादस पलटि के खोड़स परगटै,
गगन गरजै तहाँ बजै तूरा ॥
इंगला पिंगला सुषमना सम करै,
अर्ध औ उर्ध बिच ध्यान लावै ।
कहै कबीर सोइ संत निर्भय रहै,
काल की चोट फिर नाहिं खावै ॥

(३२)

अधर आसन किया अगम प्याला पिया,
जोग की मूल गहि जुगति पाई ।
पंथ बिन जाइ चलि सहर बेगमपुरे,
दया गुरुदेव की सहजि आई ॥
ध्यान धरि देखिया नैन बिन पेखिया,
अगम अगाध सब कहत गाई ।
कहै कबीर कोइ भेद बिरला लहै,
गहै सो कहै या सैन भाई ॥

(३३)

सहर बेगमपुरा गम्म को ना लहै,
होय बेगम्म सो गम्म पावै ।

गुनों की गम्म ना अजब बिसराम है,
सैन को लखै सोइ सैन गावै ॥
मुक्ख बानी तिको[1] स्वाद कैसे कहै,
स्वाद पावै सोई सुक्ख मानै ।
कहै कबीर या सैन गूँगा तई,
होय गूँगा सोई सैन जानै ॥

(३४)

अधर ही ख्याल औ अधर ही चाल है,
अधर के बीच तहँ मट्ठ कीया ।
खेल उलटा चला जाइ चौथे मिला,
सिंघ के मुक्ख फिर सीस दीया ॥
सबद घनघोर टंकोर तहँ अधर है,
नूर को परसि के पीर[2] पाया ।
कहै कबीर यह खेल अवधूत का,
खेलि अवधूत घर सहजि आया ॥

(३५)

छका[3] अवधूत मस्तान माता रहै,
ज्ञान बैराग सुधि लिया पूरा ।
स्वास उस्वास का प्रेम प्याला पिया,
गगन गरजै तहाँ बजै तूरा ॥
पीठ संसार से नाम-राता रहै,
जतन जरना लिया सदा खेलै ।
कहै कबीर गुरु पीर से सुरखरू[4],
परम सुख धाम तहँ प्रान मेलै ॥

---

(१) तिसका। (२) गुरू। (३) मतवाला। (४) आदर के योग्य।

(३६)

छका सो थका फिर देह धारै नहीं,
करम औ कपट सब दूर कीया।
जिन स्वास उस्वास का प्रेम प्याला पिया,
नाम दरियाव तहँ पैसि[1] जीया॥
चढ़ी मतवाल औ हुआ मन साबिता[2],
फटिक ज्यौं फेर नहिं फूटि जावै।
कहै कबीर जिन बास निर्भय किया,
बहुरि संसार मैं नाहिं आवै॥

(३७)

तरक संसार से फरक फारिग सदा,
गरक[3] गुरु ज्ञान मैं जुगत जोगी।
अर्ध औ उर्ध के बीच आसन किया,
बंक प्याला पिवै रस्स भोगी
अर्ध दरियाव तहँ जाय डोरी लगी,
महल बारीक का भेद पाया।
कहै कबीर योँ संत निर्भय हुआ,
परम सुख धाम तहँ प्रान लाया॥

(३८)

माड़ि मतवाल जहँ ब्रम्ह भाठी जरै,
पिवै कोइ सूरमा सीस मेलै।
पाँच को पेलि सैतान को पकरि के,
प्रेम प्याला जहाँ अधर झेलै।

(१) घुस कर। (२) थिर। (३) डूबा हुआ।

पलटि मन पवन को उलटि सूधा कँवल,
अर्ध औ उर्ध बिच ध्यान लावै ।
कहै कबीर मस्तान माता रहै,
बिना कर ताँतिया नाद गावै ॥

(३६)

आठ हूँ पहर मतवाल लागी रहै,
आठ हूँ पहर की छाक[१] पीवै ।
आठ हूँ पहर मस्तान माता रहै,
ब्रम्ह की छौल[१] मैं साध जीवै ॥
साच ही कहतु औ साच ही गहतु है,
काच को त्याग करि साच लागा ।
कहै कबीर यों साध निर्भय हुआ,
जनम औ मरन का भर्म भागा ॥

(४०)

करत कलोल दरियाव के बीच मैं
ब्रम्ह की छौल[१] मैं हंस झूलै ।
अर्ध औ उर्ध की पैंग बाढ़ी तहाँ,
पलटि मन पवन को कँवल फूलै ॥
गगन गरजै तहाँ सदा पावस[२] झरै,
होत झनकार नित बजत तूरा ।
वेद कत्तेब की गम्म नाहीं तहाँ,
कहै कबीर कोइ रमै सूरा ॥

(४१)

गगन की गुफा तहँ गैब का चाँदना,
उदय औ अस्त का नाँव नाहीं ।

---

(१) आनन्द (२) बर्षा ।

दिवस औ रैन तहँ नेक नहिँ पाइये,
प्रेम परकास के सिंध माहीं ॥
सदा आनंद दुख दुन्द ब्यापै नहीं,
पूरनानंद भरपूर देखा ।
भर्म और भ्रांति तहँ नेक आवै नहीं,
कहै कबीर रस एक पेखा ॥

(४२)

खेल ब्रम्हंड का पिंड में देखिया,
जग्त की भर्मना दूरि भागी ।
बाहरा भीतरा एक आकासवत,
सुषमना डोरि तहँ उलटि लागी ॥
पवन को पलटि के सुन्न में घर किया,
धर[1] में अधर भरपूर देखा ।
कहै कबीर गुरु पूर की मेहर से,
तिरकुटी मद्ध दीदार पेखा ॥

(४३)

देखि दीदार मस्तान मैं होइ रह्यो,
सकल भरपूर है नूर तेरा ।
सुभग दरियाव तहँ हंस मोती चुगैं,
काल का जाल तहँ नाहिँ नेड़ा ॥
ज्ञान का थाल औ सहज मति बाति है,
अधर आसन किया अगम डेरा ।
कहै कबीर तहँ भर्म भासै नहीं,
जन्म औ मरन का मिटा फेरा ॥

---

(१) शरीर ।

(४४)

सूर परकास तहँ रैन कहँ पाइये,
रैन परकास नहिँ सूर भासै ।
ज्ञान परकास अज्ञान कहँ पाइये,
होइ अज्ञान तहँ ज्ञान नासै ॥
काम बलवान तहँ नाम कहँ पाइये,
नाम जहँ होय तहँ काम नाहीँ ।
कहै कबीर यह सत्त बीचार है,
समुझ बिचार करि देखु माहीँ ॥

(४५)

एक समसेर[1] इकसार बजती रहै,
खेल कोइ सूरमा संत झेलै ।
काम दल जीत करि क्रोध पैमाल[2] करि,
परम सुख धाम तहँ सुरत मेलै ॥
सील से नेह करि ज्ञान का खड़ग लै,
आय चौगान मेँ खेल खेलै ।
कहै कबीर सोइ संत जन सूरमा,
सीस को सौँप करि करम ठेलै ॥

(४६)

पकरि समसेर[1] संग्राम मेँ पैसिये,
देह परजंत कर जुद्ध भाई ।
काटि सिर बैरियाँ दाब जहँ का तहाँ,
आय दरबार मेँ सीस नाई ॥

---

(१) तलवार । (२) रौँदना ।

करत मतवाल जहँ संत जन सूरमा,
घुरत निरसान तहँ गगन धाई ।
कहै कबीर अब नाम से सुरखरू,
मौज दरबार की भक्ति पाई ॥

(४७)

देँह बंदूक श्रौर पवन दारू[1] किया,
ज्ञान गोली तहाँ खूब डाटी ।
सुरत की जामकी[2] मूठ चौथे लगी,
भर्म की भीत[3] सब दूर फाटी ॥
कहै कबीर कोइ खेलिहै सूरमा,
कायराँ खेल यह होत नाहीं ।
आस की फाँस को काटि निर्भय भया,
नाम रस रस्स कर गरक माहीं ॥

(४८)

ज्ञान समसेर को बाँधि जोगी चढ़ै,
मार मन मीर रन धीर हूवा ।
खेत को जीत करि बिषन सब पेलिया,
मिला हरि माहिं अब नाहिं जूवा ॥
जगत में जस्स औ दाद दरगाह में,
खेल यह खेलिहै सूर कोई ।
कहै कबीर यह सूर का खेल है,
कायराँ खेल यह नाहिं होई ॥

---

(१) बारूत। (२) रस्सी या दूसरी जलने वाली चीज़ जिस से रंजक में श्राग पहुँचाते हैं। (३) दीवार।

(४९)

सूर संग्राम को देखि भागै नहीं,
देखि भागै सोई सूर नाहीं ।
काम औ क्रोध मद लोभ से जूझना,
मँडा घमसान तहँ खेत माहीं ॥
सील औ साच संतोष साही भये,
नाम समसेर तहँ खूब बाजै ।
कहै कबीर कोइ जूझिहै सूरमा,
कायराँ भीड़ तहँ तुरत भाजै ॥

(५०)

साध का खेल तो बिकट बेँड़ा मती,
सती औ सूर की चाल आगे ।
सूर घमसान है पलक दो चार का,
सती घमसान पल एक लागे ॥
साध संग्राम है रैन दिन जूझना,
देह पर्जंत का काम भाई ।
कहै कबीर टुक बाग ढीलो करै,
उलटि मन गगन से जमीं आई ॥

(५१)

भगति सब कोइ करै भर्मना ना टरै,
भर्म जंजाल दुख दुन्द भारी ।
काल के जाल में जगत सब फंदिया,
आस की डोर जम जोर डारी ॥
ज्ञान सूझै नहीं सबद बूझै नहीं,
सरन ओटा नहीं गर्ब धारी ।

ब्रम्ह चीन्हे नहीं भर्म पूजत फिरै,
हिये के नैन क्यौं फोरि डारी ॥
थापि निर्जीव को काटि सर्जीव धर,
जीव का हतन अपराध भारी ।
जीव का दर्द बेदर्द कसकै नहीं,
जीभ के स्वाद नित जीव मारी ।
एक पग ठाढ़ कर जोरि बिनती करै,
रच्छ बलि जाँउ सरना तिहारी ।
वहाँ कोइ नहीं है अर्ज अंधा करै,
कठिन दंडौत नहिं टरत टारी ॥
जीव अपराध सिर पर चढ़ाइ के,
रतन सोँ जमम सो हारि डारी ।
कहै कबीर तूँ साच की नजर करु,
बोलता ब्रम्ह घट महँ उँजारी ॥

(५२)

जागते देव को सेव रे मुग्ध नर,
नहीं तो बिकल चित होइ सोई ।
पुरुष की सेव तेँ परम पद पाइये,
नारि सेवा नहीं मुक्ति होई ।
पुरुष परमातमा देव निर्बान है ॥
नारि यह करत परपंच सारा ।

कर्म अकर्म को त्यागु रे बावरे,
  कहै कबीर तब होइ पारा ॥

(५३)

सबद को खोजि ले सबद को बूझि ले,
  सबद ही सबद तूँ चलो भाई ।
सबद आकास है सबद पाताल है,
  सबद तैं पिंड ब्रम्हंड छाई ॥
सबद बयन बसै सबद सरवन बसै,
  सबद के ख्याल मूरति बनाई ।
सबद ही बेद है सबद ही नाद है,
  सबद ही सास्त्र बहु भाँति गाई ॥
सबद ही जंत्र है सबद ही मंत्र है,
  सबद ही गुरू सिष को सुनाई ।
सबद ही तत्व है सबद निःतत्व है,
  सबद आकार निराकार भाई ।
सबद ही पुरुष है सबद ही नारि है,
  सबद ही तीन देवा थपाई ।
सबद ही दृष्ट अदृष्ट ओंकार है,
  सबद ही सकल ब्रम्हंड जाई ।
कहै कबीर तैं सबद को परखि ले,
  सबद ही आप करतार भाई ॥

(५४)

है कोई दिल दरवेस तेरा ॥
नासूत मलकूत जबरूत को छोड़ि के,
जाइ लाहूत पर करै डेरा ॥
अकिल की फहम तैं इलम रोसन करै,
चढ़ै खरसान[१] तब होय उजेरा ॥
हिर्स हैवान को मारि मरदन करै,
नफस सैतान जब होय जेरा ॥
गौस औ कुतुब दिल फिकर जा का करै,
फतह कर किला तहँ दौर फेरा ॥
तखत पर बैठिके अदल इन्साफ करु,
दोजख औ भिस्त का करु निबेरा ॥
अजाब सवाब का सबब पहुँचे नहीं,
जहाँ है यार महबूब मेरा ॥
कहै कबीर यह छोड़ि आगे चला,
हुआ असवार तब दिया दरेरा ॥

(५५)

स्वारथ की बात को सभन मिलि समुझिया,
साच की बात मन मैं न आवै ।
बेद औ सास्त्र सब स्वारथ ही कथत है,
और जो कहो वह कहाँ पावै ॥
अस्थि[२] औ माँस तैं दूध की आदि है,
स्वाद के हेतु घृत पवित्र बतावै ।
तिल औ तेल उतपत्ति है घास की,
मद्दुम कहैं कोइ नाहिं खावै ॥

---

(१) सान। (२) हाड़।

तुचा तें ऊन औ किर्म तें पाट है,
पाट अंबर सोई मनै भावै ।
काठ का फूल फल सुघर बस्तर बना,
मद्धुम कहै मन मैं न आवै ॥
गाय औ हरिन दोउ चाम के महल मैं,
गउछाला कोई ना बिछावै ।
जीवते दूध आचार पूजा करै,
मरे पंडित बड़ दोष लावै ॥
साच औ झूठ का ज्ञान करि देखिये,
लीन अलीन है द्वैत बाजी ।
एक को निंदिया एक को बंदिया,
कहै कबीर नहिं साहिब राजी ॥

(५६)

रैन दिन फिरत खरसान[१] गुरुदेव की,
आरसी[२] दाग नहिं लगन पावै ।
ज्ञान का कड़ा औ सब्द का मसकला,
काटि के मोरचा दरस पावै ॥
झूठ के ऊपरे साच चालै नहीं,
होय जो धात तो सान खावै ।
कहै कबीर यह जीव है काँच का,
टूकड़ा टूकड़ा होइ जावै ॥

(५७)

मुरसिद की मेहर से मोम दिल पाक है,
बंदगी नूर पहिचान भाई ।

---

(१) सान । (२) दर्पन, आईना ।

हक़्क़ हलाल ईमान साबूत कर,
मान परतीत छुटि जाय काई ॥
छोड़ दे कहर को जहर सै[1] देह का,
साच से सफा[2] का गुसल[3] होई ।
कहै कबीर कलमा काया हुआ,
जुक्ति के संग साहिब सोई ॥

(५८)

ज्ञान का गुसल कर पाक का ओजू[4] कर,
पंज तकबीर[5] परतीत पाई ॥
जत सत रोजा रह पचीस को जेर कर,
तीन को मेट दरवेस भाई ॥
तीन को मेट रहमान को भेंट तूँ,
तोहि हर रोज आपै लखाई ॥
भिस्त फारिग हुआ पीर परचै लहा,
बिरला मुरीद दरगह बताई ॥
कहै कबीर सरबंग अविगत लखा,
सिफत क्या करौं दुसर नाहिं पाई ॥

(५९)

वाह वाह उस मुरसिद कै कदम को,
एक ही ख्याल में निहाल कर दिया है ।
मारत है तान तान सुरत की कमान जान,
वाही जानै जिसे वार पार किया है ॥
पीर मेरा साचा मैं मुरीद ता का,
जिन्ह मेहर करि मस्तक पर दस्त पंजा दिया है ।

(१) शय=चीज़ । (२) शफ़ा=निरोगता । (३) नहान । (४) वज़ू पंच स्नान । (५) पाँच वक़्त की नमाज़ ।

आप कहूँ असा[1] कहूँ तसबीह कहूँ किताब,
 कबीर किरपा तैं जिन मुआ है न जिया है ॥

(६०)

चेतु रे चेतु नर कहाँ भटकत फिरै,
 आप सँभारि चित चेतु प्यारे ॥
दूसरा कौन है कहाँ ढूढ़त फिरै,
 देखु सँभारि सोवै कहा रे ॥
कहाँ तेरि आदि है कहाँ बुनियाद है,
 कहाँ तैं आया कहाँ जायगा रे ॥
आगे औ पीछे की खबर कर बावरे,
 कौन है तूँ कौन करनहारे ॥
सृष्टि जा की रची सकल घट पूर है,
 आप अपनायो सबही बिसारे ॥
तीर्थ औ बर्त आचार पूजा घनी,
 जोग औ जुक्ति सब पचे हारे ॥
नाम सुमिरत रहै न्यारा सबही कहै,
 मोहिं हरि मिलैं धीरज धारे ॥
जिन्हैं हरि ना मिले आस झूठी तजी,
 जियत मिलि रहे सोइ जन नियारे ॥
कहै कबीर कोइ जियतही मिलि रहै,
 आपहूँ तरे औरन तारे ॥

(६१)

चेत रे चेत नर जतन कर जीव का,
 रतन सा जनम क्या जानि खोवै ।

---

(१) सोंटा ।

छोड़ परपंच पाखंड सब जीव का,
डारु बहु बोझ क्यौं बोझ ढोवै ॥
भर्म की भक्ति मैं नष्ट जिव जायगा,
साच सो रूप लख काज होवै ।
का भयो बहुत बिस्तार मूरत पुजे,
सिला जड़ सेइ नितनेम[1] धोवै ॥
बहुत लौलीन होइ संख धुन करत है,
घंट घनघोर अंदोर[2] होवै ।
धूप औ गंध लै पुहुप पूजा करै,
स्वाद के सँग सदा नींद सोवै ॥
हिये का सुन्न जड़ देव पूजत मरै,
सच्चिदानंद नहिँ ब्रम्ह जोवै ।
बोलता ब्रम्ह सिरताज है सभन का,
प्रगट परतच्छ क्या जानि खोवै ॥
ऐसा संसार पाखंड का खेल है,
असल को मेटि कै नकल जोवै ।
कहै कबीर बीचार बिन दूनियाँ,
काल के सँग सदा नींद सोवै ॥

(६२)

भजन करु भजन करु भजन करु राम का,
भजन है सोई जो राम रीझै ।
प्रेम है सोई जो ओर ले निर्बहै[3],
राम को चीन्ह जो काम सीझै ॥

(१) सदा। (२) कोलाहल, शोर। (३) अंत तक निभ जाय।

डिंभ बहुतै करै फायदा कुछ नहीं,
बढ़त है ब्याज दिन मूल छीजै ।
मान सबही करै चीन्ह नाहीं पड़ै,
प्रेम बिनु स्वाद कहु काहि पीजै ॥
दुलह घर में नहीं दुलहिन भाँवरि फिरै,
अजब अचरज्ज का खेल बूझै ।
मुए मिलने की आस सबही करी,
गैल की सैल नहिं नैन सूझै ॥
भये कहुँ और तें चले कहुँ और पै,
कहा मानै नहीं कहा कीजै ।
मन के रंग संसार टीड़ो[१] भई,
भेड़ औ टिड्डी को काज कीजै ॥
पड़े अंध कूप में पार पावैं नहीं,
छुटि न जंजाल जम जुआ दीजै ।
कहै कबीर सँभार कछु कहा सुनु,
दूसरा है नहीं दृष्टि कीजै ॥

(६३)

सील संतोष तें सबद जा मुख बसै,
संत जन जौहरी साच मानी ।
बदन बिकसित रहै ख्याल आनन्द में,
अधर में मधुर मुसकात बानी ॥
साच डोलै नहीं झूठ बोलै नहीं,
सुरत में सुमति सोइ स्रेष्ठ ज्ञानी ।

(१) टिड्डी ।

कहत हौं ज्ञान पूकारि कै सभन से,
देत उपदेस दिल दर्द जानी ॥
ज्ञान को पूर है रहनि को सूर है,
दया की भक्ति दिल माहिं ठानी ।
ओर तें छोर ले एक रस रहत हैं,
ऐसे जन जक्त में बिरले प्रानी ॥
ठग बटमार संसार में भरि रहे,
हंस की चाल कहँ काग जानी ।
चपल औ चतुर हैं बने बहु चीकने,
बात में दुरुस्त पै कपट ठानी ॥
कहा तिन्ह से कहौं दया जिन्ह के नहीं,
घात बहुते करैं बकुल ध्यानी ।
दुर्मती जीव की दुबिधि छूटै नहीं,
जन्म जन्मान्तर पड़े नर्क खानी ॥
काग कूबुद्धि सूबुद्धि पावै कहाँ,
कठिन कठोर बिकराल बानी ।
अगिन के पुंज हैं सितलता तन नहीं,
बिष औ अमृत दोउ एक सानी ॥
कहा साखी कहे सुमति जागी नहीं,
साच की चाल बिन धूर धानी ।
सत सुकिरत की चाल साची सही,
काग बक अधम की कौन खानी ॥
कहै कबीर कोइ सुघर जन जौहरी,
सदा सवधान छीर नीर छानी ।

आप को आप लख आपु तहक़ीक़ कर,
आदि औ अंत रस एक जानी ॥

(६४)

दुरुस्त जिभ्या रहै बचन अमृत कहै,
काम औ क्रोध का खोज[१] खोई ।
ज्ञान का पूर है रहनि का सूर है,
संत जन जौहरी सबद जोई ॥
ज्ञान की दृष्टि में झूठ धोखा तजा,
साच बिन काज काहू न होई ।
बोलता ब्रम्ह से दूसरा कौन है,
आतमा राम तहकीक सोई ॥
देख दिवि दृष्टि करि दूसरा है नहीं,
भर्म के फंद मति परै कोई ।
दूसरा खोजते केते जुग टरि गये,
सिद्ध समाधि नहिं पार पाई ॥
सिद्ध साधक मुनी जन सब पचि मुए,
ब्रम्ह-ऋषि बेद पढ़ि निगम गाई ।
कोई आकार कहि कोई निराकार कहि,
तत्त्व को छोड़ि निःतत्त धाई ॥
समुझि नाहीं परै उक्ति[२] सब कोइ करै,
आप को आप नहिं लखै भाई ।
राज औ पाट तजि चले बनखँड गये,
सिद्ध समाधि धुनि गगन छाई ॥

---

(१) निशान । (२) बुद्धिमानी, अनुमान ।

अहरनिसि[1] आस लागी रहै सुन्न मैं,
बिना जल पिये क्या प्यास जाई ।
आस लागी रहे प्यास बूझै नहीं,
सुन्न गृह से फलहि कौन पाई ॥
भर्मना छोड़ि दे ज्ञान को मानि ले,
आप को चीन्ह तूँ कौन भाई ।
देख दिल ढूँढ़ि कै सृष्टि का की रची,
जल से जुगति कहु को बनाई ॥
कहै कबीर तूँ ताहि तहक़ीक़ करु,
लाल की खान कहु कौन ठाँई ।
कौन के तुम अहौ कहाँ तुम जाहुगे,
बिना देखे परतीत लाई ॥

(६५)

अजब आचरज संसार का खेल है,
झूठ को थामि के प्रेम लागै ।
साच के कहे छुइ जात है तुरतही,
उठै भिन्नाइ[2] ज्यौं फनिक[3] जागै ॥
पाथर को सुर[4] कहै ईसुर नाहीं लखै,
जड़ को सेवै चेतन्य त्यागै ।
बोलता ब्रह्म, चेतन्य ईसुर सही,
सेव मन कर्म सब भर्म भागै ॥
आतम परमातमा देखु सब एक को,
दया धरु हृदय मैं सुमति जागै ।

(१) दिन रात । (२) क्रोध मैं भर कर । (३) साँप । (४) देवता ।

काम औ क्रोध खनि[1] गाडु चित चेति कै,
तब तोहिं तरत नहिं बार लागै ॥
चतुर चतुरंग है सुघर पंडित बने,
लिये जड़ देव बहु खंभ बागै[2] ।
जगन्नाथ रामनाथ परसि गोदावरी,
द्वारका छाप लै देह दागै ॥
नित नेम आचार औ संख धुनि करतु है,
सुमिरन ध्यान नहिं कबहुँ स्वाँगै[3] ।
संसय की मोट अपार सिर पर चढ़ी,
जन्म जन्मान्तर कहँ मोच्छ माँगै ॥
मोच्छ औ मुक्ति को दाँव ऊहाँ नहीं,
आस की डोरि मैं सुरति टाँगै ।
आस अपनपौ चीन्हि पावै नहीं,
सुघट को छोड़ि औघट राँगै[4] ॥
मन को चरित्र काहू जानि नहिं परै,
दूसरा भाव मन रंग लागै ।
मनहिं की थाप मैं तीर्थ औ मूर्ति हैं,
जाति औ पाँति मन नाहिं त्यागै ॥
रैन औ दिवस मन ध्यान सुमिरन करै,
मन सावज[5] होइ भाँकि भागै ।
कहै कबीर सुख साहिबी सो करै,
साच औ झूठ को भेद पावै ।
चीन्ह अपनपौ आपही होइ रहै,
भर्म तैं मुक्त होइ बिमल गावै ॥

---

(१) खोद कर । (२) बगीचे । (३) स्वाँग की तरह अर्थात झूठ मूठ को भी नहीं करता । (४) रँगै । (५) शिकार, वहशी ।

(६६)

फहम[1] करु फहम करु फहम करु मान यह,
फहम बिनु फिकिर नहिं मिटै तेरी ।
सकल उँजियार दीदार दिल बीच है,
जौक औ सौक सब मौज तेरी ॥
बोलता अलमस्त मस्तान महबूब है,
इन से अदल कहु कौन केरी ।
एकही नूर दरियाव भरि देखिये,
फैल वह रहा सब सृष्ट में री ॥
आपही गनी[2] गरीब है आपही,
आप गनीम[3] होइ आप घेरी ।
आपही चोर पुनि साहु है आपही,
आपही कथै ज्ञान आप सुने री ॥
आपही हरी हिरनाकुस आपही,
आप नरसिंह होइ आप गेरी[4] ।
आपही रावना आप रघुनाथ जी,
आप को आपही आप दलै री ॥
आप बलिराम होइ दान बसुधा[5] किया,
आप बावन होइ आप छलै री ।
आप ही कृस्न है कंस है आपही,
आप को आप आपहि हतै री ॥
आपही भक्त भगवंत है आपही,
और नहिं दूसरा अर्ज सुनै री ।

(१) समझ, बिचार । (२) धनी । (३) शत्रु । (४) गिराया । (५) पृथ्वी ।

आप तैं दूसरा धिंगड़[१] ठाढ़ा किया,
आप ही मूर्ति है आप पुजेरी ॥
कहै कबीर कोइ जगे जन जौहरी,
जिन सत का सरूप हेरि लिये री ॥

(६७)

जीभ का फूहरा पंथ का चूहरा[२],
तेज तमा[३] धरे आप खोवै ।
काम औ क्रोध दुइ पाप का मूल है,
कुबुधि का बीज क्या जानि बोवै ॥
सील संतोष लै सबद उच्चारहू,
साध के दरस क्यों जान गोवै[४] ।
साध के दरस में परस पारस मिलै,
ज्ञान की दृष्टि में सरस होवै ॥
साध लच्छन गुनवन्त गंभीर है,
बचन लौलीन भाषा सुनावै ।
पातरी[५] फूहरी अधम का काम है,
राँड़ का रोवना भाँड़ गावै ॥
कहै कबीर तू पैठ दरियाव में,
लाल अमोल तब नजर आवै ॥

(६८)

रूप बिनु रेख अलख सबही कथै,
पिंड पग सीस नहिं प्रान काया ।
पृथी जल पवन पावक तहाँ कछु नहीं,
रज सत तम नहीं त्रिगुन माया ॥

(१) धिंगड़ा=नीच। (२) भंगी। (३) भारी लालच। (४) जान छिपावै। (५) वेश्या।

बीज नहिँ बृच्छ नहिँ पुरुष नारी नहीँ,
जीवन मरन नहिँ अस्त लखाया।
दिवस औ रैन नहिँ तारागन चंद नहिँ,
गगन आकास नहिँ धूप छाया॥
जल नहीँ थल नहीँ जीव औ सृष्टि नहिँ,
काल जिवमार नहिँ संसय सताया।
पार के पार परब्रम्ह पूरुष बसै,
कथैँ पंडित जना निगम गाया॥
कहै कबीर यह दुन्द चहुँ दिसि मचा,
जुगन की भूल नहिँ भेद पाया॥

(६६)

कहाँ लोँ कहौँ चहुँ जुग की भूल है,
गुरू सब सृष्टि ब्रम्हा भुलाना।
बाट चीन्है नहीँ उक्ति मन मैँ धरै,
बुद्धि परगास मन माहिँ ठाना॥
नाम करतार का कहा कहि लीजिया,
बिबि[१] अच्छर गहि बाँधि लीन्हा।
ररा औ ममा दुइ अच्छर इन्ह सोँ कही,
यही बिबि अच्छर का ध्यान कीन्हा॥
कही बिरंचि बिस्नु निजु कै सुनी,
सुना सिव स्रवन दै साच माना।
यहि पुरुष पुरान औ पारब्रम्ह निरगुन हैँ,
साधन सोँ भिन्न हैँ राम जाना॥

(१) दो।

यही सुनि सिव औ बिस्नु हूँ चित गहे,
रहे सुख पाय धन धाम चीन्हा ।
कहै कबीर यह ज्ञान तिर्देव का,
फैलाय आप सब सृष्टि दीन्हा ॥

(७०)

मेहर बिनु मेहरबाँ किस तरह पाइये ॥
मेहर की कफनी कुलह भी मेहर की,
मेहर का मुतंगा[१] कमर में लगाइये ।
मेहर का आसा तमाशा भी मेहर का,
मेहर का आब दिल को पिलाइये ॥
अंदर भी मेहर है बाहर भी मेहर है,
मेहर के महल मैं मेहरबाँ मनाइये ।
कहर की लहर में कोटि जन बहि गये,
(कबीर) मेहर बिनु मेहरबाँ किस तरह पाइये ॥

(७१)

देख बे देख अलेख के खेल को,
बना सरबज्ञ नाना अपारा ।
आपही भोग बिलास रस कामिनी,
आपही नन्द का कान्ह कुमारा ॥
आप ही भक्त प्रहलाद हिरनाकुस,
अपना उदर लै आप फारा ।

(१) मूँज की करधनी जो साधू लोग बाँधते हैं ।

कहै कबीर यह मन का खेल है,
चित्र ये बान तैं कौन मारा ॥

(७२)

कहर की जहर दिल बीच तैं दूर कर,
खोज दिल बीच जहँ बसत हक्का[१]।
खूब महबूब है खूब वह यार है,
करन कारन जहाँ सबद पक्का ॥
खड़े दर्दवंद दरवेस दरगाह मैं,
खैर औ मेहर मौजूद मक्का ।
जिकिर कर जिकिर कर फिकिर को दूर कर,
कहै कबीर यह सखुन[२] पक्का ॥

(७३)

कहै कबीर तू साध गुरु सेइ ले,
दया के तख्त पर बैठु भाई ।
ज्ञान के महल मैं सकल सुख साहिबी,
साध संगति मिले भेद पाई ॥
भेद पाये बिना भर्म भागै नहीं,
भर्म जंजाल धरि काल खाई ।
साच औ झूठ को परखि तहकीक करि,
संत जन जौहरी भला भाई ॥
प्रगट परतच्छ है साच सोइ जानिये,
दृष्टि ना परै सो झूठ झाँई ।

(१) हक़ यानी ख़ुदा। (२) बचन।

बड़ी मरजाद पाखंड की जगत में,
साच के कहतही कलह होई ॥
चीन्हि साहिब परै काज तबही सरै,
परम आनंद बड़ भाग सोई ।
सिफत बहुतै सुनी अजब दुलहा बना,
बिरहनी बिरह गुन बहुत गाई ॥
दरस बिन परस बिन आस पूजै नहीं,
नीर बिन प्यास कबहूँ न जाई ।
नीर नियरे हुता प्यास भइ दूर की,
मर्म जानै नहीं जुगत कोई ॥
काँच के महल मैं भूँसि कुत्ता मरा,
आपनी छाँह को आप धाई ।
देखु दिबि दृष्टि यह सृष्टि जहँड़े[१] गई,
मड़ि रहा धोख सब घट्ट माहीं ॥
मरकट मूँठि गहि आप छोड़ै नहीं,
फँसि रहा मूढ़ जम फाँस माहीं ।
देखि के केहरी[२] आपनी पर्तिमा[३],
पड़ा है कूप में प्रान खोई ॥
कहै कबीर यह भर्म है दूसरा,
मर्म जानैं नहीं अंध लोई ।
करतूत बहुतै कहैं रहनि में ना रहैं,
कहै ज्यौं रहै त्यौं संत सोई ॥

---

(१) ठगा गई । (२) शेर । (३) छाया ।

(७४)

सुखी सब जीव गुरुदेव की सरन हैं,
काल का बान तहँ नाहिँ लागै।
आठहू पहर जहँ राम रस पीवना,
करम औ भरम सब दूरि भागै॥
ज्ञान बीचार औ ध्यान निर्भय रहैं,
रैन दिन ध्यान गुरु और नाहीं।
कहै कबीर सुख सिंध का भूलना,
मन और पवन को पलट माहीं॥

(७५)

जीव अज्ञान सब अंध चेतै नहीं,
बहै बिष धार में खाय गोता।
खोट करनी करै राम उर ना धरै,
पाप का बीज सो फिरै बोता॥
यार असनाय[१] से प्रीति अति करत है,
राम के जनन की करत हाँसी।
कहत कबीर नर ऊबरै कौन बिधि,
मारि के काल गल डार फाँसी॥

(७६)

ज्ञान का धनुष ले मुक्ति मैदान में,
सील का बान ले मतँग[२] मारा।
सबद का घाव सो साच उर में धसा,
काम दल लोभ हंकार मारा॥
क्रोध अरु मोह दहि चोर पाँचो गये,
जोति परकास देखि उँजियारा।

---

(१) आश्ना। (२) हाथी अर्थात मन।

सुन्न के महल में रमे कबीर गुरु,
सबद अनहद्द से काल टारा ॥

(७७)

मोह के माहिँ सब जीव मस्तान है,
खान औ पान सब मगन हूवा ।
नारि सो पुरुष औ पुरुष सो नारि है,
अरस औ परस मिलि नाधि जूआ ॥
नारि के रैन दिन ध्यान है पुरुष का,
पुरुष के ध्यान है नारि केरा ।
कहै कबीर सब जीव योँ ऊरझा,
कहो क्योँ छोड़िहै गर्भ फेरा ॥

(७८)

देह तो देख मिलि जायगी खेह मैं,
देह से काज कुछ कीजिये रे ।
राम का भजन औ गुरू की बंदगी,
देह धरि लाभ यह लीजिये रे ॥
चालती कौड़ियाँ काज भल कीजिये,
कौड़ियाँ साथ कुछ नाहिँ जाई ।
प्रान के छूटते पलक नहिँ यार की,
कहै कबीर सुन चेत लाई ॥

(७९)

सोवता होय जो सोई तो जागिहै,
जागता सोवता कहाँ जागै ।
मान मन माहिँ अभिमान ज्ञानी हुआ,
सबद अवधूत का कहाँ लागै ॥

कहत औ सुनत सब अवधि पूरी भई,
अन-पायिनी[१] भक्ति नहिं हाथ आई।
कहै कबीर यह ज्ञान सब थोथरा,
जीव का भला क्यों होय भाई ॥

(८०)

साध जो होय तो व्याध को नास कर,
व्याध के नास तें साध होई।
बासना व्याध सब जीव को दहत है,
बिना गुरुदेव कहु कौन खोई ॥
कतरनी कपट दिल बीच से दूर कर,
साच की सुमरनी हाथ लीजे।
कहै कबीर जब होय निर्बासना,
निर्मला नाम रस राम पीजे ॥

(८१)

गुरू की नारि तो हरि लई चन्द्रमा[२],
कुंती ने क्वारे ही करन कीन्हा[३]।
सुग्रीव की नारि तो छीनि लइ बालि ने[४],
मोहनी देखि सिव भये दीना[५] ॥

---

(१) दुर्लभ। (२) बृहस्पतिजी देवतओं के गुरु थे जिन की स्त्री से चन्द्रमा भोग किया और उस संगम से बुद्ध उत्पन्न हुए। (३) कुँती की कारी अवस्था सूर्य्य ने उसके साथ भोग किया जिस से राजा करन पैदा हुए। फिर पीछे ती का ब्याह राजा पाँडु से हुआ। (४) सुग्रीव की स्त्री को उसके बड़े भाई लि ने छीन लिया था इस की कथा रामायन में है। (५) शिवजी का अहंकार ीजीत होने का तोड़ने को बिष्नु ने मोहनी रूप धारन किया था जिसके पीछे ाव बिह्वल हो कर दौड़े।

अहिल्या बाम्हनी तैं इन्द्र ने छल किया[१] ,
द्रोपदी पंच भरतार कीन्हा[२] ।
पारा ऋषि मछोदरी तैं काम क्रीड़ा करी[३] ,
कृस्न गोपिन के रंग भीना ॥
ब्रम्हा पुत्री तैं भोग बरबस किया[४] ,
पाप औ पुन्न दोइ घोरि पीना ।
कहै कबीर सब देव अन्याई भये,
इनहीं का कहा सब सृष्टि कीन्हा ॥

झूलने

(१)

खाक जान तो खाक मैं रलि जावै,
तब आपु गुलाब[५] समाइये जी ।
वह नूर नबी तहकीक करै,
तब आदि मुराद को पाइये जी ॥
असमान की दृष्टि को गर्द करै,
तब सुन्न समाधि लगाइये जी ।
सुन्न छोड़ि बेसुन्न तैं रहित होवै,
तब धाम कबीर का पाइये जी ॥

---

(१) अहिल्या गौतक ऋषि की स्त्री का नाम था जिसके साथ छल से इन्द्र ने भोग किया। इस पर उसके पति ने सराप दिया और वह पत्थर की शिला बन गई। फिर श्रीरामचन्द्र ने उसका उद्धार किया। (२) द्रोपदी के पाँच पति पाँचो पांडव थे (३) देखो नोट न० पृष्ठ ६१। (४) ब्रह्मा के विषय में कथाओं मे लिखा है कि उन्होंने अपनी कन्या से भोग किया। (५) अंतरी कँवल ।

(२)

पाक जाति साहिब आलम की जी,
इसै जानि के दूसरा कौन जोवै[1] ॥
कसरत करै दुख मेटने को,
सुख दम के साथ करार होवै।
सुख दुख को मेटि के एक करै,
यहि जानि के आपु को आपु मोवै[2] ।
बुजुर्ग कबीर के संग दया,
हर दम मैं एका एक होवै ॥

(३)

सब घट मैं आप वह खेलता है,
तूँ दूसरा और क्या पेखता है ॥
पिरथी पवन के बीच पानी,
दरमियान मैं तेज[3] कलोलता है।
सत रज मिलाय आकास ही को,
दम धरि के बानी बोलता है ॥
याहि बोल को तहकीक करो,
क्या हलुका भारी तोलता है।
दम दम सेती जगत खेती,
दया संग कबीर जो खोलता है ॥

(४)

बार पार की हद्द हदूद देखो
विच आवना जावना लेखा है।

(१) खोजै। (२) किसी चीज़ में चिकनी चीज़ मिला कर मुलायम करने को मोवना बोलते हैं। (३) अग्नि।

नदी नाव का यह संजोग बना,
तहाँ मिलना जुलना देखा है ॥
देख भालि के यौं आनन्द करो,
हम तुम मैं एक परे क्या है ।
कोई वार रहै कोइ पार रहै,
दया संग कबीर बिबेका[१] है ॥

(५)

कोइ ज्ञान करै भावै[२] ध्यान धरै,
गुन रूप उचारि के गावता है ।
कोइ जोग करै भावै मौन धरै,
अनहद्द अलेख बतावता है ॥
सुरझी उरझी की भूल पड़ी,
घट घट का भेद नहिं पावता है ।
रहै जीव जगत के संग दया,
कायम कबीर बतावता है ॥

(६)

तखत बना हाड़ चाम का जी,
दाना पानी का भोग लगावता है ।
मल मूत्र झरै लोहू माँस बढ़ै,
आप अपना अंस बढ़ावता है ।
नाद बिंद के बीच कलोल करै,
सो आतमराम कहावता है ॥
अस्थान यही कहाँ ढूढ़ता है,
दया देस कबीर बतावता है॥

(१) परखा । (२) चाहे ।

(७)

(एक) नर नारी छोड़ि उदास फिरैं,
  सो तो संगहिं मनसा नारि भोगी।
अलख की प्यास बिन बिरहित तन,
  भो छीन सद पिंडरोग रोगी॥
सुरझी उरझी की भूल पड़ी,
  दुख जेर भये संसार सोगी।
कबीर कहै कोइ नाहिं बूझै,
  यह मन के रंग सब भये जोगी॥

(८)

काठ के बीच मैं अगिनि जैसे,
  जैसे तिल मैं तेल निवास है जी।
दूध के बीच मैं घीव जैसे,
  ऐसे फूल के बीच मैं बास है जी॥
कबीर कहै घट को जो मथै,
  तब पावै सबद प्रकास है जी।
मिहनत बिना सब ढूँढ़ फिरे,
  यह बात से लोग निरास है जी॥

(९)

यह तो एक हुबाब[१] है जी,
  साकिन दरियाव के बीच सदा।
हुबाब तो ऐन दरियाव है जी,
  देखो मौज[२] बहर[३] नजर जुदा॥
उठने मैं तो हुबाब है जी,
  बैठने[४] मैं है मतलब खुदा।

(१) पानी का बुल्ला। (२) लहर। (३) समुद्र। (४) मन को स्थिर करने मैं

हुबाब दरियाव कबीर है जी,
  दूजा नाम बोलै सो बुदबुदा ॥

(१०)

जब लग खोज चला जावै,
  तब लग नहिं हाथ मुद्दा[१] आवै ।
जहाँ खोज थकै तहाँ हीं घर करै,
  वहाँ घर को पकड़ि के बैठि जावै ॥
थकित रहै जब दिल सेती,
  तब आगे चलना नहिं भावै ।
कबीर मुद्दा हासिल हूआ,
  बातन से नहिं कोइ महल पावै ॥

(११)

तन महजिद मन मुलना बसै,
  चित्त के चौतरा बंग देवै ।
पाँच को जेर पचीस को जिबह कर,
  तत्त की तसबी[२] हाथ लेवै ॥
मेहर को देख के कहर को खोइ के,
  इस भाँति मेहर तैं कहर खोवै ।
कहै कबीर कोइ संत जन जौहरी,
  आप साहिब आसिक होवै ॥

(१२)

सूर को कौन सिखावत है,
  रन माहिं असी[३] का मारना जी ।

---

(१) मतलब, तत्व वस्तु । (२) सुमिरनी । (३) तलवार ।

सती को कौन सिखावता है,
   सँग स्वामी के तन जारना जी ॥
हंस को कौन सिखावता है,
   नीर छीर का भिन्न बिचारना जी ।
कबीर को कौन सिखावता है,
   तत्त रंगों को धारना जी ॥

(१३)

दरियाव की लहर दरियाव है जी,
   दरियाव और लहर मैं भिन्न कोयम[1] ।
उठे तो नीर है बैठे तो नीर है,
   कहो दूसरा किस तरह होयम[2] ॥
उसी नाम को फेर के लहर धरा,
   लहर के कहे क्या नीर खोयम[3] ।
जक्त ही फेर सब जक्त और ब्रह्म मैं,
   ज्ञान करि देख कबीर गोयम[4] ॥

(१४)

अनप्रापत बस्तु को कहा तजे,
   प्रापत तजै सो त्यागी है ।
असील तुरंग को कहा फेरे,
   अफतर[5] फेरै सो तो बागी[6] है ॥
जग भव का गावना क्या गावै,
   अनुभव गावै सो रागी है ।
बन गेह की बासना नास करै,
   कबीर सोई बैरागी है ॥

---

(१) क्या । (२) हो सकता है । (३) गुप्त हो गया । (४) गुप्त । (५) अवतर, बदमाश । (६) शह-सवार ।

(१५)

खुदी छोड़ि खुदा को याद करो,
पढ़ि पाक साहिब का झूलना जी ।
केते झूलि गये केते झूलते हैं,
सो तो रैन का देखना पेखना जी ॥
जहाँ नेह लगा जहाँ जोर न था,
तहाँ नेह लगाइ क्या तोड़ना जी ।
दास कबीर बिचारि कहै,
क्या कुल्हिये में गुड़ फोड़ना जी ॥

(१६)

दीदार करो रोसन प्यारे,
गुलजार यही है और न कोई ।
दरगाह में पीर मुकाम सदा,
इक संग रहो छोड़ो दिल दोई ॥
तुम आप में आप सबूत करो,
जिय जान जमाते चेतन सोई ।
औजूद मौजूद कबीर बोलै,
पहिचान अवाज कायम सोई ॥

(१७)

असमान का आसरा छोड़ प्यारे,
उलटि देखो घट अपना जी ।
तुम आप में आप तहकीक करो,
और छोड़ दो मन की कलपना जी ॥
बिन देखे जो निज नाम जपै,
सो कहिये रैन का सपना जी ।

कबीर दीदार परघट देखा,
तब आपका जपना जी ॥

(१८)

हाय हाय जहान में मौत बुरी,
जिन्ह मारि जहान को जेर कीया ।
अब बोलता था अब चालता था,
अब जाइ जँगल में घर कीया ॥
कौड़ी भर आग मँगाय के जी,
लख चारि का माल जलाय दीया ।
घर बार के सब रोवैं बैठे,
पाँच तत्त कबीर बताय दीया ॥

(१९)

दारा गृह छोड़ि उदास फिरै,
बन खंड में जाइ समाधि लागै ।
इँगला पिंगला सुखमना ध्यान,
झिलिमिलि जोति के मद्ध पागै ॥
तीरथ में नित भरमि फिरै,
द्वारका जाइ के देह दागै ।
कबीर कहै पै बिबेक बिना,
कछू नहिँ बंदे हाथ लागै ॥

(२०)

मुक्त होवै छुटै बंधन सेती,
तब कौन मरै तिसे कौन मारै ।
अहंकार तजै भय रहित होवै,
तब कौन तरै तिसे कौन तारै ॥

मरना जीना है ताही को,
जो आपु को आपु बिसारि डारै ।
चेतन्य होवै उठि जागि देखै,
दया देखि के जोति कबीर धारै ॥

(२१)

घट घट में रटना लागि रही,
परघट हुआ अलेख है जी ।
कहुँ चोर हुआ कहुँ साह हुआ,
कहुँ बाम्हन है कहुँ सेख है जी ॥
बहुरंगी प्यारा सब से न्यारा,
सबही में एकै भेष है जी ।
कबीर मुरसिद मिला उस में,
हम तुम नाहीं वह एक है जी ॥

(२२)

गुरु प्रेम का अंक पढ़ाय दिया,
अब पढ़ने में कुछ नहिं बाकी ।
बावन चिराग जलाय दिया,
पट खोलि महल में ले झाँकी ॥
चार बेद तो पासै तखत लगे,
सुछम बेद उपर आसन जा की ।
कहै कबीर इक नूर सेती,
सरफराज हुआ बंदा खाकी ॥

(२३)

कोइ कुच्छ कहै कोइ कुच्छ कहै,
हम अटके हैं जहाँ अटके हैं ।

सुरत कमल पर अमल किया,
महबूब के नाम पै झटके हैं ॥
संसार बिचार के छोड़ दिया,
हम इसी बात पै सटके हैं ।
दास कबीर के झूलने मैं,
सब पंडित काजी फटके हैं ॥

(२४)

भाषा तो संतन ने कहिया,
संसकिर्त रिषिन की बानी है जी ।
ज्योँ काली पीली धेनु दुहिया,
एकही छीर सो जानी है जी ॥
ज्योँ सरिता सागर कूप जथा,
सिद्धान्त तिहूँ मैं पानी है जी ।
कहै कबीर एक अर्थ लीजै,
भिन्न मानते सो अज्ञानी हैं जी ॥

(२५)

ब्रह्मा की औलाद[१] कमल तैं है,
अगस्त कुंभ तैँ जानिये जी[२] ।
स्रिंगी की माया ताे मृगिनी है[३],
किरती सुत ब्यास बखानिये जी[४]

(१) उत्पत्ति । (२) मैत्रेय और बरुण दोनोँ साथ बैठे थे कि उधर से उरबसी अप्सरा के जाते देख कर दोनोँ ऐसे कामातुर हो गये कि मैत्रेय ने तो तुर्त उस से भोग किया जिस से बशिष्ठ मुनि जनमे और बरुण ने जो अपने को न रोक सके अपना बीर्य्य एक घड़े मेँ गिरा दिया जिस से अगस्त मुनि उत्पन्न हुए । (३) द्रोनाचार्य्य नदी मैँ नहा रहे थे कि उनका बीर्य्य पात हो गया । उसी समय उस जल को आकर एक हिरनी ने पीलिया जिस से वह गाभिन होगई और उस के पेट से शृंगी ऋषि पैदा हुए । (४) ब्यास जी मछोदरी के पेट से (जिस का नाम सत्यवती और कोई २ कीर्त्ती बताते हैँ) पाराशर ऋषि के बीर्य्य से पैदा हुए थे ।

बसिष्ठ की माय तो गनिका है,[१],
गोकरन गऊ तें जानिये जी[२]।
बालमीक को माय तो बामिया है[३],
संकर पिता कर मानिये जी ॥
हम तो बूझि बिचारि देखा,
दासी नारद कर मानिये जी[४]।
कबीर एते आचारजों में,
बाम्हन कवन बखानिये जी ॥

---

(१) देखो पृष्ठ ६१ नोट नं० २। (२) किसी राजा के एक पंडित थे जिन को पुत्र होने की बड़ी अभिलाषा थी। एक बार किसी साधू ने उन्हें एक फल दिया कि इस को अपनी स्त्री को खिला दो तो उस के पुत्र होगा। पंडित जी ने उस फल को अपनी स्त्री को दिया पर स्त्री ने जो औलाद होने से डरती थी उस फल को छिपाकर घर की गऊ को खिला दिया जिस के प्रभाव से उस गऊ के पेट से गोकरन जी पैदा हुए। इन के कान गऊ की तरह होने से इनका नाम गोकरन पड़ा। (३) बालमीक जी बहेलिया थे। तपो भूमि में उनके शरीर के चारों ओर दीमकों ने ढूहे और साँपों ने बाँबी बना ली थी जिस के बाहर निकलने पर वह बाँबिया कहे जाते थे। (४) नारद मुनि का जन्म दासी के पेट से हुआ था।

॥ इति ॥

संतबानी पुस्तकमाला

कबीर साहिब का साखी संग्रह - - -	१=)
कबीर साहिब की शब्दावली, भाग पहला ।।।), भाग दूसरा -	।।।)
,, ,, ,, भाग तीसरा ।≈), भाग चौथा -	≡)
,, ,, ज्ञान-गुदड़ी, रेख़्ते और भूलने - -	।=)
,, ,, अखरावती - - -	=)
धनी धरमदास जी की शब्दावली और जीवन-चरित्र - -	।।-)
तुलसी साहिब (हाथरस वाले) की शब्दावली और जीवन-चरित्र भाग प०	१≈)
,, ,, भाग २, पद्मसागर ग्रंथ सहित - -	१≈)
,, ,, रत्नसागर मय जीवन-चरित्र -	१।-)
,, ,, घट रामायन मय जीवन चरित्र, भाग १ -	१।।)
,, ,, ,, भाग २ -	१।।)
गुरु नानक की प्राण-संगली सटिप्पण, और जीवन-चरित्र, भाग पहिला	१।।)
,, ,, ,, ,, भाग दूसरा	१।।)
दादू दयाल की बानी, भाग १ "साखी" १।।) भाग २ "शब्द" -	१।)
सुंदर बिलास और सुंदरदास जी का जीवन-चरित्र - -	१-)
पलटू साहेब की बानी और जीवन चरित्र भाग १ - -	।।।)
,, भाग २—रेख़्ते, भूलने, अरिल, कबित्त, -	।।।)
,, सवैया भाग ३—भजन और साखियाँ - -	।।।)
जगजीवन साहिब की बानी भाग पहला ।।।-) भाग दूसरा -	।।।-)
दूलन दास जी की बानी और जीवन-चरित्र - - -	।)।।
चरनदासजी की बानी और जीवन-चरित्र, भाग १ ।।।-), भाग दू०	।।।)
ग़रीबदास जी की बानी और जीवन-चरित्र - - -	१।-)
रैदास जी की बानी और जीवन-चरित्र - - -	।।)
दरिया साहिब (बिहार वाले) का दरिया सागर और जीवन-चरित्र	।=)।।
,, ,, के चुने हुए पद और साखी- -	।-)
दरिया साहिब (मारवाड़ वाले) की बानी और जीवन-चरित्र -	।≡)
भीखा साहिब की शब्दावली और जीवन-चरित्र - -	।।≈)।।
गुलाल साहिब (भीखा साहिब के गुरु) की बानी और जीवन-चरित्र	।।।≈)
बाबा मलूकदास जी की बानी और जीवन-चरित्र - -	।)।।
गुसाईं तुलसीदास जी की बारहमासी - - -	-)
यारी साहिब की रत्नावली और जीवन-चरित्र - - -	≈)
बुल्ला साहिब का शब्दसार और जीवन-चरित्र - -	।)
केशवदास जी की अमीघूँट और जीवन-चरित्र - -	-)।।
धरनीदास जी की बानी और जीवन-चरित्र - -	।≈)
मीरा बाई की शब्दवली और जीवन-चरित्र - -	।।)

सहजो बाई का सहज-प्रकाश और जीवन-चरित्र – – – |≡)॥

दया बाई की बानी और जीवन-चरित्र – – – ।)

संतबानी संग्रह, भाग १ [साखी] – – – – १।।)

[प्रत्येक महात्मा के संक्षिप्त जीवन-चरित्र सहित]

संतबानी संग्रह, भाग २ [शब्द] – – – – १।।)

[ऐसे महात्माओं के संक्षिप्त जीवन-चरित्र सहित जो भाग १ में नहीं दी है]

दूसरी पुस्तकें

लोक परलोक हितकारी सपरिशिष्ट [जिसमें ऐतिहासिक सूची व १०२ स्वदेशी और बिदेशी संतों, महात्माओं और विद्वानों और ग्रंथों के अनुमान ६५० चुने हुए बचन १६२ पृष्ठों में छपे हैं] — तसवीर सहित: सजिल्द १।) ; बेजिल्द ।।।≈)

(परिशिष्ट) बेजड़े नगीने – – – – ≡)

अहिल्याबाई का जीवन चरित्र अँग्रेज़ी पद्य में (सचित्र) – – ।)

हिन्दी कवितावली – – – – – ~)॥

नागरी सीरीज़

सिद्धि – – – – ॥)

उत्तर ध्रुव की भयानक यात्रा (सचित्र) – – – ॥)

सावित्री और गायत्री – – – – ॥)

करुणा देवी (स्त्री शिक्षा का अपूर्व उपन्यास) – – – ॥=)

महारानी शशिप्रभा देवी (अनूठा उपन्यास) – – – १।)

द्रौपदी (रंगीन चित्र सहित छपी है) – – – ।।।)

प्रेम तपस्या – – – – – ।=)

कर्मफल – – – – – ।।।)

दुःख का मीठा फल – – – – – ।।।=)

सटीक विनय-पत्रिका – – – – – २।।)

रामचरित-मानस (सटीक व सचित्र) पृष्ठ लगभग १३५० ८)

द्रौपदी और कृष्ण का रंग बिरंगों में ख़ूबसूरत चित्र – मूल्य ।)

(आकार १०″ × ७½″)

दाम में डाक महसूल व रजिस्टरी शामिल नहीं है वह इसके ऊपर लिया जायगा। ग्राहकों से निवेदन है कि अपना पता साफ़ लिखें।

मनेजर, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद।